शोध-चिंतन पत्रिका: विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित ई शोध पत्रिका
वर्ष: 3, अंक:4; जनवरी-जून, 2022
पृष्ठ संख्या : 83-90

कबीर का आध्यात्म और उनका दर्शन

✍ डॉ. किरण हजारिका

शोध-सार :

हिंदी साहित्य में कबीरदास का प्रमुख स्थान है । वे एक ऐसे संत हैं, जिन्होंने भक्तिकालीन संत साहित्य को एक नया आयाम दिया । केवल साहित्य में ही नहीं, बल्कि भक्तिकालीन समाज में भी कबीर का अद्वितीय योगदान रहा है । कबीर विराट मानवता के कवि हैं और किसी एक विचार के आधार पर उनका मूल्यांकन नहीं किया जा सकता । कबीर का दर्शन, उनका अध्यात्मबोध निर्गुण भक्ति पर आधारित है ।

बीज शब्द: *कबीरदास, दर्शन ।*

प्रस्तावना :

कबीर एक ऐसे सन्त हैं, जो परम्परा बोध के साथ स्वयं के अनुभव को महत्व देते हैं। वे परम्परा के अनुगामी भी हैं और स्वयं राही भी । कबीर पर पर्याप्त अध्ययन हुआ है, किन्तु कबीर का व्यापक अध्ययन एक स्थान पर उपलब्ध नहीं है । जैन धर्म में छह अन्धों और हाथी की कहानी के द्वारा यह बताया गया कि अंधों ने हाथी के बारे में अलग-अलग विचार रखे, जो अपूर्ण थे; किन्तु सभी के विचारों को मिलाकर हाथी का भौतिक स्वरूप स्पष्ट हो गया । कबीरदास के बारे में जो अध्ययन हुआ है, वह सूक्ष्म विषय का अध्ययन है उसमें सबका अध्ययन मिलकर भी अपूर्ण है; क्योंकि वह अन्धों के हाथी का स्थूल अध्ययन नहीं है । कबीर पर धुरन्धर हिन्दी के विद्वानों ने अपने-अपने अध्ययन प्रस्तुत किये हैं,

फिर भी अध्ययन की गुंजाइश बनी हुई है। प्रस्तुत शोध-पत्र में कबीर के दर्शन के संदर्भ में चर्चा की गयी है।

विश्लेषण :

कबीर ने अपनी अनुभूति को अपने काव्य में प्रस्तुत किया है। उनकी यह अनुभूति किसी निर्धारित पैमाने से नहीं तौली जा सकती। महत्वपूर्ण यह है कि उन्होंने यदि भगवान के बारे में कुछ कहा है, तो मनुष्य को नकारा नहीं है। आज साहित्य के केन्द्र में मनुष्य आ गया है। कबीर ने परमात्मा को स्वीकार करते हुए उस मनुष्य को महत्व दिया है, जो परमात्मा को स्वीकारता है। परमात्मा को स्वीकार करने का अर्थ अनन्त संभावनाओं को स्वीकार करना है-

हद्द चलै सो बेहद चलै सो साध।।

हद बेहद दोनों तजे ताकर माता अगाधा।।(द्विवेदी 2013:366)

परमात्मा के विश्वास का अर्थ है अनन्त में विश्वास करना। सामान्य रूप से किसी कवि या विचारक की अधिक बातें तत्कालीन परिस्थितियों से जुड़ी होती हैं किन्तु इसके साथ ही कुछ बातें सार्वभौमिक होती हैं। कबीर की विचारधारा का एक महत्वपूर्ण भाग सार्वभौमिक है जिससे उनकी अमरता अक्षुण्ण है। उन्होंने परमात्मा को सार्वभौम सूक्ष्म एवं सर्वव्यापी माना है। परमात्मा एक ऐसे प्रत्यय हैं,जहाँ से समस्त मानवीय ऐक्य का सूत्र प्रसूत होता है। कबीर कहते हैं कि परमात्मा इतना विराट् है कि उन्हें सगुण-निर्गुण की सीमाओं में नहीं बांधा जा सकता। पिंड और ब्रह्माण्ड उनकी सीमाएँ नहीं हैं। जो परमात्मा अनादि और अनंत हैं, वे पिण्ड और ब्रह्माण्ड की सीमा में कैसे आ सकते हैं? कबीर की इस विचारधारा का अभिप्राय यह है कि परमात्मा अपनी सृष्टि से बड़े हैं ,वे सर्वव्यापी हैं। इस सर्वव्यापकता एवं महानता के निरूपण में ही उनका दर्शन उनके काव्य में नियोजित होता है।

कबीर जिस ब्रह्मानुभूति की चर्चा करते हैं; वह योगियों की सहजावस्था है, जिसे योगी सहज अवस्था के नाम से पुकारते हैं, कबीर उसे रामरस कहते हैं। कबीर के निर्गुण राम सर्वव्यापी हैं, किन्तु उनके विचार योगियों से भिन्न हैं । आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी बताते हैं कि योगी जिसे ब्रह्म प्राप्ति समझते हैं, कबीर उसे साधन मात्र मानते हैं । इस प्रकार कबीर की दृष्टि में मौलिकता है । इस परमात्मा की सर्वव्यापकता के आधार पर ही कबीर ने समानता की बात कही है । उनके इस विचारधारा में समानता मानवतावाद की आत्मा है। कबीर प्रजातंत्र के बारे में कुछ नहीं जानते थे। उनके समय में सामन्तवाद का बोलबाला था । उनके ज्ञान की व्यापकता का कारण परमात्मा के प्रति प्रेम था, वे परमात्मा को जननी मानते थे ।

विचारकों ने सामान्य रूप से उनके दर्शन को अद्वैतवादी स्वीकार किया है । इसका कारण स्पष्ट है कि रहस्यानुभूति अद्वैतवाद की भूमि पर ही उत्सर्जित होती है । कबीर ज्ञानी और भक्त दोनों हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी 'कबीर' में लिखते हैं-

> कबीर की वाणी वह लता है, जो ज्ञान के क्षेत्र में भक्ति का बीज पड़ने से अंकुरित हुई थी । (द्विवेदी 2013:316)

ध्यान के लिए कबीर ने योगियों की पद्धति को अपनाया, परन्तु उन्होंने योगियों की पद्धति को समग्रता से ग्रहण नहीं किया। उन्होंने रामानन्द से भक्ति की जो पूँजी ग्रहण की थी, उसे व्यापक बनाया। सच्चाई यह है कि कबीर ने मानव मात्र की एकता की संकल्पना भक्त के रूप में ही किया था। उन्होंने न केवल स्वयं रामनाम का मर्म समझा था, वरन् औरों को समझाया भी था । उन्होंने सबमें एक राम तत्व को व्याप्त देखा था । कबीर ने भेदभाव का विरोध किया था । ऊँच-नीच, जात-पात, ज्ञानी-मूर्ख, हिन्दू-मुसलमान, आत्म-पर, राम-रहीम, केशव-करीम का अनुभव करने वालों को फटकारा था। यही कबीर का मानवतावाद है। यही उनका विशिष्ट अवदान है ।वे इस अर्थ में क्रान्तिकारी हैं कि वे सबके भीतर

एक आत्मा की बात को बोध के साथ स्वीकार करते हैं। उन्होंने अपनी आत्मप्रेरणा के आधार पर समस्त मानव की एकता की बात को जोर देकर कहा है। उनके विचार से समस्त ब्रह्माण्ड के स्वामी परमात्मा हैं। इतना ही समस्त ब्रह्माण्ड परमात्मा का विस्तार है, यह विश्व परमात्मा से अलग नहीं है। सोने का बना हुआ गहना भी सोना है।

आज वैश्वीकरण, विश्व गाँव की धारणा मानवता का विषय बना हुआ है। व्यावहारिक एवं सैद्धांतिक रूप में वैश्वीकरण की क्रिया विलासिता के लालच के चलते शक्तिशाली राष्ट्र दादा तो बन गये हैं, त्राता नहीं बन सके हैं। प्रेम स्वार्थ से ऊपर उठे बिना मानवता को अनुप्राणित नहीं कर पाता। आज विज्ञान समस्त विश्व को इलेक्ट्रान का प्रवाह मानता है। उसके अनुसार या तो पदार्थ ऊर्जा में बदल रहा है या ऊर्जा पदार्थ में। ऐसी स्थिति में जड़ता-संचालित सिद्धान्त से ऊपर उठने के लिए अद्वैतवादी दर्शन को समझने की आवश्यकता है, जिसे कबीर ने समझा था। आज के विचारक को भी यह दृढ़ता से समझना होगा कि पदार्थ और ऊर्जा जिसे दर्शन की भाषा में शिव और शक्ति कहा गया है, उसकी लीला में भ्रमित होने से अच्छा है, उस लीला में सम्यक् रूप से सक्रिय होना। भोगवादी दृष्टि का विकास एकांगी अभिरूचि के कारण होता है। ऋषियों और सन्तों ने मानव की भोगवादी कमजोरी को समझकर उसे चेताया है।

कबीर का बोध बहुत व्यापक था, उन्होंने माया की निन्दा की तथा यह बात बताया कि माया ठगिनी है वह तीन गुणों का फंदा लिए घूमती रहती है। यहाँ कबीर ने माया को वासना के रूप में चित्रित किया है। उन्होंने वासना को बुरा माना है। संसार की वस्तुओं का उल्लेख माया के रूप में न करके उनसे लगाव को कबीरदास ने बुरा माना है। संसार के अनित्यता की पहचान उन्हें है। यदि संसार परिवर्तनशील है, तब उसके प्रति प्रगाढ़ मोह दुखदायी तो होगा ही। उससे छुटकारा पाने का रास्ता प्रभु चरणों में प्रेम करना है।

भारतीय संस्कृति की महती विशेषता रही है 'त्यक्तेन भुंजी' । कबीर लालच को बुरा बताते हैं। उनके अनुसार अपनी ईमानदारी की कमाई रोटी खाने में कोई हर्ज नहीं है। दुःखद है दूसरे की घी चुपड़ी रोटी देखकर ललचना । उनका प्रभु तो कण-कण में व्याप्त है। वह खुले आकाश में बहती हुई हवा में है । परमात्मा की इससे स्पष्ट व्याख्या क्या हो सकती है? उनके दर्शन में उपनिषदों का भाव समाया हुआ है । सर्वव्यापी परमात्मा को उन्होंने केवल वाणी से नहीं कहा था । उन्होंने ब्रह्मानुभूति के पश्चात होने वाली बोधात्मकता को जिस सच्चाई से व्यक्त किया है, वह कबीर की कवि और सन्त दोनों से पृथक एक महामानव के रूप में प्रस्तुत करता है। वे अपने व्यक्तित्व की चाभी निम्नलिखित पंक्तियों में प्रस्तुत करते हैं-

ना मैं धर्मी, नाहीं अधर्मी, ना मैं जतीन कामी हो,

ना मैं कहता, ना मैं सुनता, ना मैं सेवक स्वामी हो।

ना मैं बन्धा, ना मैं मुक्ता, ना मैं विरत न रंगी हो।

ना काहू से न्यारा हुआ, ना काहू के संगी हो।

ना हम नरक लोक को जाते, नाम हम सुर्ग सिधारे हो,

सब ही कर्म हमारा कीया, हम कर्मन ते न्यारे हो।। (तिवारी 2009:63)

इन पंक्तियों में कबीर का एक ऐसा व्यक्तित्व उभरता है, जो मानवता के लिए किसी भी प्रकार का त्याग कर सकता है।

डॉ. अमत्र्य सेन ने 'दि आइडिया ऑफ जस्टिस', न्याय के स्वरूप में लिखा है कि प्रत्येक व्यक्ति के कुछ अपराक्राम्य अधिकार होते हैं । विश्व के इतिहास में इस प्रकार के अधिकार के प्रयोग करने वाले व्यक्तियों में महाभारत के श्रीकृष्ण, भारत के महात्मा गान्धी, अमेरिका के अब्राहम लिंकन दक्षिणी अफ्रीका के नेल्सन मंडेला के नाम लिये जा सकते हैं । ऐसे व्यक्तियों का व्यष्टि और समष्टि एक होता है । कबीर का आध्यात्मिक दर्शन ऐसे ही व्यक्तियों को पैदा करता है । सामान्य रूप से कबीर के दर्शन में

ऐसी भावना का पुट है, जहाँ से किसी भी युग की मानवता को विकसित करने वाला प्रकाश उत्सर्जित होता है।कबीर के विराट व्यक्तित्व के निर्माण में योगियों की साधना, रामानन्द की भक्ति भावना एवं सूफियों की प्रेम भावना का अन्वय है। यही कारण है कि उनका विराट् व्यक्तित्व उसी प्रकार विकसित हुआ है, जैसे गंगा विविध नदियों का जल लेकर अन्त में अगाध समुद्र में लीन होती है। उन्होंने सम्पूर्ण साधना के सहारे शक्ति अर्जित की किन्तु उनका व्यक्तित्व इन साधनाओं के गुणों का योगफल नहीं है, उसमें मानवता का रसायन है। यदि कबीर केवल साधनाओं का वर्णन अपनी कविता में करते, तो वे एक साधक मात्र रह जाते हैं । ऐसी स्थिति में उनकी उपयोगिता केवल साधक के रूप में रह जाती, वे युग द्रष्टा नहीं बन पाते।उन्होंने सारतत्व को ग्रहण करते हुए भी मानवता की बात की। यद्यपि समीक्षक यह मानते हैं कि यह उनका प्रमुख विषय नहीं है, किन्तु वे मानवतावादी दृष्टि को छोड़कर कबीर की समीक्षा नहीं कर सकते । उन्होंने असमानता एवं ढोंग पर जो बातें कहीं हैं वे उनकी मानवता भरी दृष्टि के प्रमाण हैं। मनुष्य से काटकर ब्रह्म का वर्णन नहीं किया जा सकता है, कबीर इस सत्य को भली- भाँति समझते थे।

कबीर सामाजिक असमानता की बात अनेक स्तरों पर करते हैं । एक स्थल पर वे निर्धन की बात करते हुए कहते हैं कि जो निर्धन है, उसका आदर कोई नहीं करता। यदि निर्धन व्यक्ति धनी के यहाँ जाता है, तो वह मुँह फेर लेता है ; किन्तु वहीं धनी जब निर्धन के यहाँ आता है, वह आदर करता है। कौन समझावे कि धनी और निर्धन तो भाई-भाई हैं। कबीर ज्ञानी थे, दार्शनिक थे ,इसीलिए उन्हें सामान्य आदमी के साथ होने वाले अन्याय का दुःख था। परदुःख कातरता का बोध विराट् हृदय में आता है। शेक्सपियर के नाटक किंग लियर में जब किंगलियर गरीबी की पीड़ा का अनुभव कर लेता है, तब वह कहता है कि जब तक वह भिखारी रहेगा, चिल्लाता ही रहेगा और कहता रहेगा कि अमीर होना गुनाह नहीं है। किन्तु यदि वह अमीर हो गया तो फिर उसे यही कहना अच्छा लगेगा कि गरीबी से बड़ी कोई बुराई नहीं है (तिवारी 2009:123)।

कबीर ने गरीबी झेली थी, खुली आँखों से उन्होंने समाज को देखा था। आज के युग की सबसे बड़ी बुराई यह है कि लोगों की सहानुभूति भी अपने वर्ग के लोगों से होती है, दूसरे वर्ग से नहीं।

डॉ. अमत्र्य सेन न्याय का स्वरूप में 'अनावृत्त समदर्शिता' पर विचार करते हुए बताते हैं-

> दुनिया में लोग अपने वर्ग या अपने से सम्बन्धित लोगों के प्रति सहानुभूति रखते हैं, जबकि आज के युग में अनावृत्त समदर्शिता की आवश्यकता है। अनावृत्त समदर्शिता जाति, धर्म एवं वर्ग से निरपेक्ष होती है। कबीर की समदर्शिता परमात्मा के मानक पर प्रतिष्ठित है। वे सबके प्रति समान विचार रखते हैं। आज की प्रजातांत्रिक धारणा भी अनावृत्त समदर्शिता हैं। (सेन 2010:180)

भारतीय संविधान में सबकी समता के अधिकार की बात की गयी है। संविधान में व्यक्ति की समानता, स्वतंत्रता तथा प्रतिष्ठा में कबीर की समानता की भावना को सरलता से ढूंढा जा सकता है।

संविधान की प्रस्तावना में लिखा है-

> हम भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण राष्ट्र सम्पन्न, प्रभुत्व सम्पन्न समाजवादी एवं निरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक न्याय, विचार अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए तथा सबमें व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता (वसु 2015:23)

कबीर ने कोई दर्शन नहीं पढ़ा था, न तो उनके समय में समानता, स्वतंत्रता, बन्धुता का सिद्धान्त प्रचलित था। उन्होंने ब्रह्म को सृष्टि का एक मात्र कर्ता मानते हुए अपने विचारों को व्यक्त किया है। इन विचारों के पीछे उनका अद्वैत दर्शन है, आज भारत के संविधान की प्रस्तावना में जो लिखा गया है, कबीर के विचार उसके समान्तर है, यद्यपि उन्होंने प्रजातंत्र एवं समाज का अध्ययन नहीं किया था।

निष्कर्ष :

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि कबीर का दर्शन मानवतावादी है। स्वामी विवेकानन्द ने मानव सेवा को महत्व दिया था, कबीर ने मानवता की असमानता पर सवाल उठाया, उन्होंने ब्रह्म के साथ मानव समाज का दर्शन किया, यही उनकी साधना की पूर्णता है।

ग्रंथ-सूची :

तिवारी, रामचन्द्र.मध्ययुगीन काव्य-साधना. वाराणसी:विश्व विद्यालय प्रकाशन, 2009.

दास, श्यामसुन्दर.कबीर ग्रंथावली. काशी:नागरी प्रचारिणी सभा, 1928.

द्विवेदी, हजारी प्रसाद.कबीर. नई दिल्ली:राजकमल प्रकाशन प्रा. लिमिटेड, 2013

वसु, आचार्य दुर्गादास.भारत का संविधान : एक परिचय. 2015.

सेन, अमत्र्य.न्याय का स्वरूप. दिल्ली:राजपाल एण्ड सन्स, 2010.

संपर्क-सूत्र :
अध्यक्ष, टेङाखात महाविद्यालय
डिब्रुगड़, असम
ई-मेइल: hazarikakiran68@gmail.com